स्वराज पंचायत

सुनील सहस्रबुद्धे

वर्तमान शासन के बारे में समझ यह बन रही है कि यह अधिनायकवादी है, भारतीय संविधान का सम्मान नहीं करता है, वैश्विक पूँजी के साथ मेल में और कुछ चुनिंदा कॉरपोरेट घरानों के साथ नज़दीकी रिश्ते में निजीकरण और उदारीकरण की उद्दंड नीतियां अपना रहा है और समाज में नफ़रत को बढ़ावा दे रहा है. तमाम राजनीतिक दल और सामाजिक कार्यकर्त्ता इसके विरोध में हैं और अपनी-अपनी प्राथमिकताओं को लेकर तरह-तरह के आपसी तालमेल की प्रक्रियाओं में हैं. इस प्रक्रिया में व्यापक मंचों पर परिवर्तन के कार्यकर्ताओं ने अपनी उपस्थिति दर्ज करनी चाहिए तथापि साथ ही इस देश में आमूल सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनी स्थापनाओं का इस बड़ी प्रक्रिया में लोप नहीं होने देना चाहिए. इस बात को ध्यान में रखते हुए थोड़ी चर्चा इस पर्चे में की गई है.

१९९० के आस-पास से सोवियत यूनियन के टूटने, वैश्वीकरण के विस्तार पाने, सूचना (इंटरनेट) उद्योग के दिन दूना रात चौगुना आगे बढ़ने तथा दूसरे खाड़ी युद्ध के साथ युद्ध क्षेत्र में सर्वथा नए तौर तरीकों के विकसित होने से शुरू होकर आज तक पूँजीवाद और साम्राज्यवाद ने नई नई वैचारिक स्थापनाओं, नई प्रौद्योगिकी और नई राज्य व्यवस्थाओं व वैश्विक बाजार के जरिये लूट और शोषण में बड़ी बढ़ोत्तरी की है. प्रचलित लोकतांत्रिक, समाजवादी और सांप्रदायिक व्यवस्थाओं सभी ने इसी प्रक्रिया में ज़ोर भरा है. यूरोप से उपजी परिवर्तन की विचारधाराएं इस प्रक्रिया से मुकाबला करने में सर्वथा नाकामयाब रही हैं, सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर. इसका मतलब यह है कि मुकाबले की दिक्कतों को केवल सांगठनिक स्तर पर नहीं समझा जा सकता। जिस तरह वास्तविकता में विभिन्न धाराओं के एक मंच पर आने की प्रक्रिया में किसान आंदोलन के कार्यकर्ता तथा गाँधी से लेकर मार्क्स तक सभी के अनुयायी शामिल हैं, यह आवश्यक है कि भारतीय समाज की अपनी समझ पर हमें एक समीक्षात्मक दृष्टि डालते हुए उसकी नई आवृत्ति की ओर कदम बढ़ाने शुरू करने चाहिए. बहुत से लोग ज़रूर पहले से ऐसा कर रहे होंगे.

बड़े पैमाने पर शोषित और बहिष्कृत लोग, यानी किसान, मज़दूर, कारीगर, स्त्रियां, आदिवासी और ठेले गुमटी वाले, कालेज या विश्वविद्यालय नहीं गए होते हैं. हमें इनकी चेतना के स्वरुप को समझना होगा क्योंकि इन्हीं की चेतना की ताकत पर परिवर्तन के आंदोलन बनते हैं और मुक्ति के

रास्ते निखारे जाते हैं. ये लोग वर्गों के रूप में नहीं पाए जाते तथापि समाज के रूप में ही वे अपनी पहचान करते हैं और उसी रूप में अस्तित्व भी रखते हैं. इनकी चेतना के चार अंग हैं : नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक और ज्ञान आधारित. जबकि इन्हें अलग-अलग पहचानने से समझने की दृष्टि से कुछ मदद हो सकती है तथापि ये एक किस्म की संयुक्त चेतना के रूप में ही अस्तित्व रखती हैं. इन समाजों के जीवन में आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक और उत्पादन व ज्ञान सम्बंधित सारी गतिविधियां इसी संयुक्त चेतना से संचालित होती हैं. अपनी समझ साफ़ करने के लिए एक उदाहरण की मदद ली जाये. चोरी करना गलत है यह नैतिक चेतना है. चोरी करने से सामाजिक ताना-बाना टूटता है यह सामाजिक चेतना है. चोरी करना दंडनीय अपराध है यह राजनीतिक चेतना है. यूरिया से ज़मीन को होने वाले दूरगामी नुक्सान को पहचानना ज्ञान आधारित चेतना है. इस तरह हम चेतना के इन अंगों की थोड़ी बहुत व्याख्या करके आम लोगों के जीवन में इन चेतनाओं के आनुपातिक महत्त्व की पहचान कर सकते हैं.

आधुनिक यूरोप की राजनीतिक विचारधाराएं राजनीतिक समाज (पूंजीपति और मज़दूर वर्गों की प्रधानता में बने समाज और राज्य) के विकास के संदर्भ में विकसित हुई हैं. लोकतांत्रिक-समाजवाद और वैज्ञानिक-समाजवाद दोनों ऐसी ही विचारधाराएं हैं. भारतीय समाज लघु समाजों (सोशल फार्मेशन) से बना है और लघु समाज लघुतर समाजों से. इस प्रक्रिया को जारी रखें तो अंत में व्यक्ति पर पहुँच जायेंगे। समाज और व्यक्ति मानवीय वास्तविकता के एक दूसरे के पूरक दो छोर हैं. यह महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवीय चेतना की इस समझ में वैयक्तिक चेतना और सामाजिक चेतना का एक दूसरे के साथ संबंध निरूपित होता है. ज़मीनी कार्यकर्त्ता कमोबेश चेतना की यह समझ अक्सर रखते हैं. समस्या ज़्यादा पढ़े-लिखे लोगों के साथ है जो यूरोपीय विचारों का सन्दर्भ लिए बगैर सोच नहीं पाते.

जिस संयुक्त चेतना का ज़िक्र ऊपर किया गया है उसे मोटे तौर पर '**स्वराज चेतना**' का नाम दिया जा सकता है. परिवर्तन के आकांक्षी व्यक्तियों, समूहों, संगठनों और ढंग-ढंग से सोचने वाले एक साथ खड़े हो सकें ऐसा मंच बनाने का आधार स्वराज चेतना में रखा जाये तो ये क्रियाएं आगे तक जा सकती हैं. ऐसे मंच को '**स्वराज पंचायत**' नाम दिया जा सकता है. स्वराज पंचायत को एक मंच, कार्यक्रम और प्रक्रिया तीनों रूपों में एक साथ समझा जा सकता है. आज की परिस्थितियों में तीन बातों पर तुरन्त ध्यान दिया जाना चाहिए.

1. **नफ़रत की राजनीति और समाज में नफ़रत फैलाने का पूर्ण विरोध**: 2014 में भारतीय जनता पार्टी के दिल्ली की सत्ता पर काबिज़ होने के बाद से जाति और धर्म के आधार पर हिंसक भेदभाव में बड़ी वृद्धि हुई. 2019 के चुनाव में भाजपा की जीत ने जैसे ऐसी नीति और सामाजिक प्रक्रियाओं पर मुहर लगा दी हो, नफरत और भेदभाव ने बड़ा विस्तार पाया. भाईचारे के मूल्य को स्थापित करने और देश को बचाने के लिए यह आवश्यक है कि भाजपा 2024 में फिर सत्ता में न आ पाए.

2. **किसान आंदोलन और राजनीति के बीच सम्बन्ध पर व्यापक विमर्श, सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर**: किसान आंदोलन शुरू से ही राजनीति के साथ सम्बन्ध के प्रश्न से जूझता रहा है. जबकि अराजनीतिकता से आंदोलन और संगठन ने बड़ी एकता हासिल की, **राजनीतिक** होने का आकर्षण भी हमेशा बना रहा और समय समय पर चुनावों में भाग लिया और मुंह की भी खाई. ऐसा प्रतीत होता है कि इस बार दिल्ली की चौहद्दी पर हुए किसान आंदोलन ने राजनीति के साथ सम्बन्ध के प्रश्न को किसान समाज के व्यापक मूल्यों - न्याय, त्याग और भाईचारा - के संदर्भ में रखने का प्रयास किया. लेकिन एक बार फिर राजनीति के साथ सम्बन्ध आंदोलन में तीखे मतभेद का कारण बना. स्वराज चेतना का सन्दर्भ लें तो शायद इस प्रश्न के हल में एक बड़ा कदम आगे बढ़ाया जा सकता है.

3. **किसान-नौजवान एकता की धारणा का विकास, सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों स्तरों पर:** अभी हाल में एक बहुत बड़ा किसान आंदोलन कामयाब हुआ है. संयुक्त किसान मोर्चा द्वारा संचालित यह आंदोलन आज भी न्यूनतम समर्थन मूल्य के सवाल पर जारी है. इसके अलावा लगातार बढ़ती बेरोज़गारी को लेकर हलचल तेज़ है. सेना के लिए अग्निवीर योजना के ऐलान ने नौकरियां न देने की सरकारी मंशा साफ़ कर दी है. सभी नौकरियों को ठेकेदारी या संविदा में परिणत करने का काम लम्बे समय से चल ही रहा है. पूंजीवादी व्यवस्था में, खासकर इजारेदारी और वित्तीय पूंजी की व्यवस्था में, न नौकरियाँ मिलनी हैं और न किसानों को उनकी उपज का वाज़िब दाम ही मिलना है. किसानों और नौजवानों की समस्याओं का हल तभी निकल सकता है जब देश के आर्थिक और राजनीतिक ढाँचे में बड़ा बदलाव आये - विकेन्द्रीकृत और वितरित स्वायत्त व्यवस्थाओं की और देश आगे बढ़े. किसान - नौजवान एकता इस दिशा में आगे बढ़ने की ताकत एकजुट करती है. किसान - नौजवान एकता उस व्यापक सैद्धांतिक प्रस्थापना की मांग करती है जो आज के सन्दर्भों में नई लोकोन्मुख राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्थाओं को बहस के केंद्र में ले आएं. यही स्वराज की बहस है, जो व्यापक सामाजिक एकता के इर्द-गिर्द सांगठनिक प्रयासों को ढाल सकती है.